4. तैत्तिरीयारण्यक

इस आरण्यक में 10 प्रपाठक है। इन्हें सामान्यतया **अरण** कहा जाता है। प्रत्येक प्रपाठक का नामकरण इनके आदि पद पर आश्रित है। यथा – भद्र, सहवै, चिति, युञ्जते, देव वै, परे, शिक्षा, ब्रह्मविद्या, भृगु तथा नारायणीय। इसके सप्तम, अष्टम तथा नवम प्रपाठक को मिला देने से तैत्तिरीयोपनिषद् सम्पन्न हो जाती है। दशम प्रपाठक की प्रसिद्धि महानारायणोपनिषद् के रूप में है। इस प्रकार व्यावहारिक रूप से मूल आरण्यक 06 प्रपाठकों में ही है। प्रपाठकों का अवान्तर विभाग अनुवाकों में है। पहले 06 प्रपाठकों की अनुवाक् संख्या इस प्रकार है – 32, 20, 21, 42, 12 , 12 = 138। प्रथम प्रपाठक में आरुणकेतुक नामक अग्नि की उपासना तथा तदर्थ इष्टकाचयन का वर्णन है। द्वितीय प्रपाठक में स्वाध्याय तथा पंच महायज्ञों का वर्णन है। इसी प्रसंग में सर्वप्रथम यज्ञोपवीत का विधान है। द्वितीय अनुवाक में सन्ध्योपासन विधि है। तृतीय एवं चतुर्थ प्रपाठको में क्रमशः चातुर्होत्रचिति तथा प्रवर्ग्य होम से सम्बद्ध मन्त्र संकलित है। चतुर्थ में ही अभिचार मन्त्रों का उल्लेख है। पंचम प्रपाठक में यज्ञीय संकेत है। षष्ठ प्रपाठक में पितृमेध सम्बन्धी मन्त्र है।

5. तलवकारारण्यक

जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण सामवेद सम्बद्ध तलवकार आरण्यक के रूप में प्रसिद्ध है। यह चार अध्यायों में विभक्त है। अध्यायों का अवान्तर विभाग अनुवाकों में है। इसके चतुर्थ अध्याय के दशम अनुवाक् में प्रसिद्ध तवलकार या केन उपनिषद है। इस आरण्यक का विशेष महत्त्व प्राचीन भाषा, शब्दावली, वैयाकरणिक रूपों एवं ऐसे ऐतिहासिक तथा देवशास्त्रीय आख्यानो के कारण है, जिनमें बहुविध प्राचीन विश्वास तथा रीतियां सुरक्षित हैं।

2.23 वैदिक आख्यान का स्वरूप

वैदिकसंहिताओं, ब्राह्मणग्रंथो, आरण्यकों तथा उपनिषदों में विभिन्न आख्यान विषय को स्पष्ट करने की दृष्टि से आये हैं। ऋग्वेद में आये आख्यानों की संख्या 36 है। इन ही आख्यानों का परवर्ती साहित्य में भी उपबृंहण हुआ है, जिन्हें ब्राह्मणों, आरण्यकों, उपनिषदों, बृहद्देवता महाभारत एवं पुराणों में देखा जा सकता है। 12वीं शती में पं. द्या द्विवेद ने नीतिमञ्जरी के नाम से ऋग्वेदीय आख्यानों को सङ्कलित किया था, जिसका उल्लेख आचार्य सायण ने अपने ऋग्वेद भाष्य में किया है। 1993 में प्रकाशित डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र की **वैदिक कथा वल्लरी** भी नीतिमञ्जरी जैसा ही अभिनव ग्रन्थ द्रष्टव्य है।

2.24 शुनःशेप आख्यान का परिचय

ऋग्वेद से सम्बद्ध ऐतरेय ब्राह्मण में आख्यानों का विशाल सङ्कलन है। प्रस्तुत आख्यान का सम्बन्ध भी इसी ब्राह्मण की सप्तम पञ्चिका के तीसरे अध्याय अथवा दूसरे शब्दों में 33वें अध्याय से है। इस आख्यान के माध्यम से कर्मनिष्ठ जीवन एवं पुरुषार्थ साधना का महत्त्व प्रतिपादन सम्यक्तया किया गया है। अथक परिश्रम से ही श्री की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति सदा परिश्रमशील होता है उसका भाग्य भी निरन्तर प्रवाहयुक्त रहता है। सूर्य से हमें सतत परिश्रम की प्रेरणा प्राप्त होती है। यथा ऐतरेय ब्राह्मण (33.1) में आया है –

कलिः शयानो भवति संजिहानस्तु द्वापरः। उत्तिष्ठंस्त्रेता भवति कृतं सम्पद्यते चरंश्चरैवेति॥
चरन्वै मधु विन्दति चरन्स्वादुम्बरम्। सूर्यस्य पश्य श्रेमाणं यो न तन्द्रयते चरंश्चरैवेति॥

2.25 शुनःशेप आख्यान का कथानक

इक्ष्वाकुवंशीय वेधस राजा के पुत्र राजर्षि हरिश्चन्द्र संतति रहित थे। इनकी सौ पत्नियां थी किन्तु किसी को भी पुत्र नहीं हुआ। एक बार राजा के घर पर पर्वत और नारद नामक दो ऋषि पधारे। राजा ने नारद से पूछा – जो (देव एवं मनुष्य आदि) विवेक ज्ञान से युक्त हैं या जो (पशु आदि विवेक ज्ञान से) रहित हैं वे सभी पुत्र की इच्छा करते हैं तो उस पुत्र से पिता कौनसा लाभ प्राप्त करता है? इस प्रकार पूछे गये प्रश्न का दश गाथाओं के माध्यम से पुत्र का महत्त्व नारद द्वारा प्रतिपादित किया गया। साथ ही नारद ने हरिश्चन्द्र से वरुण देव की सशर्त (पुत्र के द्वारा आपका यजन किया जायेगा) आराधना का मार्ग बतलाया जिस के करने से राजा को रोहित नाम के पुत्र की प्राप्ति हुई। पुत्रप्राप्त्यनन्तर राजा ने अपने वचन का पालन नहीं किया फलतः वरुण देवता ने उन्हें स्मरण कराया तो राजा ने क्रमशः (अशौच बतलाकर, सम्पूर्ण अवयव यथा दांत को अक्किसित बतलाकर, दूध के दांत गिरने के अनन्तर, शस्त्रधारी न होना बतलाकर) रोहित को यजन हेतु अनर्ह ज्ञापित किया तथा प्रकारान्तर से पुत्र द्वारा यजन को लम्बित किया। अन्त में राजा ने पुत्र को सम्पूर्ण कथा बतलायी तो रोहित धनुष लेकर वन को चला गया एवं एक वर्ष तक अरण्य में विचरता रहा। यजन के सम्पादनाभाव के कारण वरुण राजा पर कुपित हो गये फलतः वरुण के प्रकोप से जलोदर रोग हो गया। जब पिता के स्वास्थ्य की जानकारी रोहित को हुई तो वह उनसे मिलने ग्राम को लौटने लगा तब ही मार्ग में ब्राह्मण वेश धारी पुरुष (इन्द्र) ने अरण्य विचरण को (विविध उदाहरणों से) श्रेष्ठ सिद्ध करते हुए पुनः लौटने के लिए समझाया, रोहित ने भी आदरपूर्वक बात का मान रखा एवम् पुनः अरण्य विचरण करने लगा। इस प्रकार वह पुनः द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम बार प्रत्येक वर्ष ग्राम की तरफ आने को उद्यत होता किन्तु पुनः इन्द्र के समझाने के पश्चात् अरण्य विचरण करने लगता।

जब षष्ठ वर्ष में रोहित ग्राम लौटने का प्रयत्न कर रहा था तो मार्ग में भूख-प्यास से पीडित अजीगर्त्त ऋषि को देखा, इनके तीन पुत्र थे शुनःपुच्छ, शुनःशेप एवं शुनोलांगूल। रोहित ने एक पुत्र के बदले 100 गाये देने का प्रस्ताव अजीगर्त्त के सम्मुख रखा, जिसे अजीगर्त्त ने लोभवश स्वीकार कर लिया। प्रथम पुत्र अजीगर्त्त को प्रिय था, तृतीय पुत्र माता को प्रिय था अतः मध्यम पुत्र शुनःशेप का विक्रय कर दिया गया। इस प्रकार रोहित शुनःशेप को लेकर अपने पिता के पास लौटा और उन्हें शुनःशेप के माध्यम से यजन कर वरुण के ऋण से मुक्ति कराने हेतु कहा। राजा ने वरुण के सामने जब रोहित के स्थान पर शुनः शेप का प्रस्ताव रखा तो क्षत्रिय बालक से ब्राह्मण बालक की श्रेष्ठता जानते हुए तैयार हो गये और राजा को राजसूय याग की विधि का उपदेश किया। याग के मध्य में आने वाले एकाह के क्रम में राजा ने शुनःशेप पुरुष रूप पशु का आलम्भन करने का निश्चय किया।

इस याग में विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ एवं अयास्य ऋषि ऋत्विक् थे किन्तु शुनःशेप रूपी सवनीय पशु को मन्त्र द्वारा यूप में बाधने का क्रूर कार्य करने वाला कोई नहीं मिला। तब सूयवस के पुत्र अजीगर्त्त ने उन सबके सामने सौ अन्य गायों के विनिमय में शुनःशेप को यूप में नियोजित करने का प्रस्ताव दिया जिसे सबने स्वीकार कर लिया। शुनःशेप के यूप में नियोजन के अनन्तर आप्री संज्ञक ऋचाओं का पाठ एवं पर्यग्निकरण होने पर शुनःशेप का वध करने को कोई पुरुष तैयार न हुआ। तब पुनः पूर्व की भांति अजीगर्त्त ने अन्य 100 गायों के विनिमय में वध करने का विचार रखा एवं सहमति होने पर वह वध के लिये तलवार को तीक्ष्ण करने में लग गया।

यह जानकर कि मेरी अब शीघ्र ही बलि दे दी जायेगी तो शुनःशेप ने अपने प्राणों की रक्षा के लिए सर्वप्रथम प्रजापति की स्तुति की। प्रजापति ने शुनःशेप को अग्नि देवता की स्तुति करने का निर्देश

दिया। अग्नि ने शुन:शेप से सविता देवता की महानता बतलाकर उनकी आराधना हेतु प्रेरित किया। सविता देवता की आराधना करने पर सविता देवता ने वरुण का माहात्मय ज्ञापित कर उनकी स्तुति करने की सलाह दी। वरुण ने अग्नि का वैशिष्ट्य प्रतिपादित कर पुन: उनकी स्तुति करने को कहा। शुन:शेप ने पुन: अग्नि की स्तुति की तब अग्नि ने उन्हें विश्वेदेव (समस्त देव) की स्तुति करने के लिए समझाया। विश्वेदेव ने इन्द्र का प्रामुख्य एवं महत्ता बतलाकर उनकी स्तुति हेतु प्रेरित किया फलत: शुन:शेप ने इन्द्र को स्तुति से प्रसन्न किया, इन्द्र ने स्वत: प्रसन्नमना होकर एक सुवर्ण रथ आरोहण हेतु दे दिया, जिसे शुन:शेप ने मन से स्वीकार किया। साथ ही इन्द्र ने अश्विनों की स्तुति करने के लिए कहा। अश्विनों ने उषा की स्तुति का मार्ग प्रशस्त किया। जब स्तुति क्रम के अन्तिम मन्त्र पढे जा रहे थे तो धीरे-धीरे हरिश्चन्द्र का पेट पिचकने लगा एवं शुन:शेप के बन्धन खुलने लगे। मन्त्र पूर्ण होते-होते हरिश्चन्द्र स्वस्थ एवं शुन:शेप बन्धन मुक्त हो गया। लोभी पिता का परित्याग शुन:शेप ने कर दिया और विश्वामित्र ने उसको ज्येष्ठ पुत्र रूप के में स्वीकार किया। तदनन्तर शुन: शेप का नामान्तरण हुआ और वे देवरात विश्वामित्र कहलाये।

2.26 शुन:शेप आख्यान का सन्देश

सामान्यत: वैदिक आख्यानों का प्रयोजन अर्थवाद के माध्यम से इष्ट सिद्धि होता है। प्रस्तुत आख्यान के माध्यम से एक ओर नर बलि जैसे कृत्य की निन्दा की गई है। साथ ही लोभी प्रवृत्ति से होने वाले दुष्परिणाम की ओर भी सङ्केत किया गया है। मनुष्य कष्ट में ईश्वर नाम स्मरण करता है किन्तु सुख का दामन आते ही कैसे अपने वचनों का परित्याग करके विविध कष्टों को निमन्त्रित कर देता है, यह भी द्रष्टव्य है।

2.27 पारिभाषिक शब्दावली

ब्राह्मण - शेषे ब्राह्मण शब्द: (जै.मी.सू.2.1.33) आचार्य जैमिनि का यह कथन है कि मन्त्र से अतिरिक्त वेद का अंश ब्राह्मण है। साथ ही ऋग्वेदभाष्यभूमिका(पृ.37) में आचार्य सायण का यह कथन **अवशिष्टो वेदभागो ब्राह्मणम्** अर्थात् मन्त्र से अवशिष्ट वेद का भाग ब्राह्मण है।

विधि - ब्राह्मण ग्रंथो के द्वारा मुख्यतया यज्ञ का प्रतिपादन किया गया है। याग के दो भाग है – विधि एवं अर्थवाद। लौगाक्षिभास्करप्रणीत अर्थसङ्ग्रह में विधि **(अज्ञातार्थज्ञापको वेदभागो विधि:)** को अज्ञात अर्थ का ज्ञापक वेद भाग बताया गया है।

ऐतरेय - महिदास ऐतरेय नामक ऋषि की प्रसिद्धि सामान्यतया ऐतरेय ब्राह्मण के प्रवाचक के रूप में है। षड्गुरुशिष्य के मतानुसार याज्ञवल्यक संज्ञक ब्राह्मण की द्वितीया पत्नी (इतरा) के पुत्र ऐतरेय थे। भट्टभास्कर के मत में इतर ऋषि के पुत्र होने के कारण ऐतरेय नाम हुआ।

इस ब्राह्मण में 40 अध्याय हैं। प्रत्येक 05 अध्यायों के समूह को पंचिका शब्द से अभिप्रेत किया गया है। इस प्रकार कुल 08 पंचिका है। अध्याय का अवान्तर विभाग खण्ड में है। समस्त पंचिका के खण्डों का योग करने पर यह खण्ड संख्या 285 प्राप्त होती है।

शतपथ - गणरत्नमहोदधि के अनुसार शतपथ यह नाम 100 अध्याय संख्या के आधार पर हुआ है – शतं पन्थानो यत्र शतपथ: तत्तुल्यग्रन्थ:।

उपनिषद् - उप$नि/ सद् - समीप बैठना

आत्म ज्ञान के लिए गुरू के समीप बैठना

साम - गीतिषु सामाख्या - गान को साम कहा जाता है। वेदमंत्रों के गान को सामवेद करते है।

गोपथ - गुप् धातु $ अथ् प्रत्यय/अथर्ववेद की पिप्पलाद शाखा का ब्राह्मण ग्रंथ

आरण्यक - अरण्ये भवः आरण्यम्। जंगल में जाकर ऋषियों द्वारा जो तत्त्व चिन्तन किया गया उसी का साहित्यिक रूपान्तर आस्मक है।

2.28 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. **शेषे ब्राह्मण शब्द:** यह उक्ति किसकी है?
   क. यास्क ख. सायण ग. जैमिनि घ. उव्वट
2. ऐतरेय ब्राह्मण का सम्बन्ध किस वेद से है?
   क. ऋग्वेद ख. सामवेद ग. यजुर्वेद घ. अथर्ववेद
3. राजा जनक द्वारा 100 गायों के दान का विषय किस आरण्यक में प्राप्त होता है?
   क. ऐतरेय ख. बृहदारण्यक ग. तैत्तिरीय घ. शांखायन
4. बृहदारण्यक में अध्याय संख्या है?
   क. 12 ख. 10 ग. 08 घ. 06
5. शुन:शेप के अग्रज का नाम था।
   क. शुन:पुच्छ ख. शुन:लांगूल ग. पर्वत घ. अजीगर्त्त

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. शतपथ ब्राह्मण के भेदों के नाम लिखिए।
2. मन्त्र ब्राह्मण के अभेद को परिभाषित कीजिए।
3. आरण्यक पद का तात्पर्य बताइये।
4. बृहदारण्यक का मुख्य प्रतिपाद्य क्या है?
5. शुन:शेप आख्यान कहां से लिया गया है?

निबंधात्मक प्रश्न

1. ब्राह्मण ग्रंथो के सांस्कृतिक महत्त्व को प्रतिपादित कीजिए।
2. ऐतरेय ब्राह्मण का परिचय दीजिए।
3. आरण्यकों की भाषा शैली पर टिप्पणी कीजिए।
4. शुन:शेप आख्यान के सन्देश पर प्रकाश डालिए।

2.29 सारांश

इस प्रकार हमने अध्ययन किया कि ब्राह्मण, आस्मक] स्थ् उपनिषद् साहित्य न केवल याज्ञित एवं दार्शनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। शुरू शेष आख्यान के माध्यम से

निष्कर्षत: हमारे प्राचीन ऋषियों तथा आचार्यों ने ब्राह्मण को मन्त्र भाग(संहिता अथवा वेद) से इतर (पृथक्) नहीं माना है। इसी प्रकार ब्राह्मणग्रंथो का अधिकतम अंश आरण्यक में अवस्थित होने के कारण आरण्यक ग्रन्थ भी वेद में ही समाहित होकर वेद रूप में ही ख्याति प्राप्त हैं। यह उत्तरोत्तर परिवर्तन मानवीय मेधा की स्मरण शक्ति के ह्रास को इंगित करता है, जिसके कारण दुर्बोध होते जा रहे वैदिक यागों का प्रयोजन एवं सार का संरक्षण आवश्यक समझा गया एवं प्राप्त ज्ञान के सुरक्षित संवहन एवं संरक्षण पूर्वक हस्तान्तरण का नवीन प्रयास किया गया। इसी शृंखला में आख्यानों की सर्जना भी वेदों में निहित मानवीय मूल्यों एवं अधीत ज्ञान का आगे से आगे संवहन हेतु एक श्रेष्ठ एवं सुरक्षित मार्ग के रूप में प्रशस्त हुई।

2.30 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. वैदिक साहित्य और संस्कृति, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा प्रकाशन, वाराणसी, 1998.
2. ऐतरेय ब्राह्मण, सुधाकर मालवीय, आनन्दाश्रम, पुणे 1980.
3. संस्कृत वाड्मय का वृहद इतिहास, प्रथम खण्ड, बलदेव उपाध्याय, उत्तरप्रदेश संस्कृतसंस्थान, लखनऊ 1956.
4. वैदिक कथा वल्लरी, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र, रुपा बुक्स, तिलक नगर, जयपुर 1980.
5. बृहद्देवता, रामकुमार राय, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी 1963.